स्कूलों की व्यवस्था
आमूल बदलाव की दरकार

अरविन्द सरदाना

इस साल हाई स्कूल के बदतरीन नतीजों (केवल 35 फीसदी बच्चे पास हुए) पर प्रतिक्रियाएं और इसके कारणों पर नज़र दौड़ाने से यही प्रतीत होता है कि ऐसे मामलों के विश्लेषण के लिए हम अक्सर फौरी तथ्यों की ही शरण में जाते हैं। उन विशेष कारणों की तलाश जारी है जिन्हें इस साल खराब रिज़ल्ट के लिए गुनहगार ठहराया जा सके, जबकि हम व्यवस्थागत खामियों और स्थिति का ईमानदारी के साथ आकलन करने से बचने का प्रयास कर रहे हैं।

यदि हम कड़वी सच्चाई का सामना करने को तैयार हैं तो 35 फीसदी का आंकड़ा भी ज़्यादा है। इतने विद्यार्थी भी बड़े पैमाने पर हुई नकल की वजह से पास हुए हैं जो आजकल ऐसी परीक्षाओं में आम बात है। इसके कई तरीके हैं - जैसे विद्यार्थियों द्वारा एक-दूसरे को पर्चियां थमाना, नकल करने वाले विद्यार्थियों की शिक्षकों द्वारा अनदेखी, उनके द्वारा सवालों के जवाब लिखवाया जाना इत्यादि। इस व्यवस्था के जानकार जानते हैं कि यह सब कुछ कितना गहराई तक पैठा हुआ है।

इस तथ्य को पचाना मुश्किल होगा, लेकिन वास्तविकता यही है कि हाई स्कूलों में लंबे अर्से से ऐसी ही खराब स्थिति रही है। अंतर केवल यही है कि इस साल खतरे की घंटी थोड़ी तेज़ सुनाई दे रही है। असल समस्या रिज़ल्ट को लेकर नहीं है, बल्कि स्कूलों के गिरते स्तर की है।

हर साल आए कमज़ोर रिजल्ट की एक बड़ी वजह तो यह है कि हाई स्कूल तक पहुंचने वाले अधिकांश बच्चों को आधारभूत प्रशिक्षण ही नहीं मिला होता है और उन्हें बाधाओं का सामना करने के लिए हाई स्कूल में ढकेल दिया जाता है। कुछ आलोचकों का मानना है कि सामूहिक नकल दसवीं से भी ज़्यादा आठवीं की परीक्षा में होती है। इससे बच्चों के स्कूल छोड़ने की स्थिति को दो साल और टाल दिया जाता है। मगर प्राथमिक और माध्यमिक स्कूलों में बच्चों को मूलभूत शिक्षा नहीं मिलती है। हमारे यहां जो व्यवस्था है, उसमें बच्चों की ज़मीन ही तैयार नहीं हो पाती है। ऐसे असफल बच्चों को 'उत्तीर्ण' करार देकर उन्हें बगैर किसी तैयारी के ही आगे की कक्षाओं का सामना करने को छोड़ दिया जाता है।

सभी कक्षाओं में और विशेषकर हाई स्कूल स्तर पर शिक्षक और विद्यार्थी दोनों ही केवल गाइड या कुंजियों का इस्तेमाल करते हैं। शिक्षक बताते जाते हैं और विद्यार्थी उसे वैसा ही परीक्षा में उतार आते हैं। यहां भी पूरा ज़ोर महत्वपूर्ण सवालों को पहचानकर उन्हें रटने पर होता है। लेकिन यदि परीक्षा में संभावित सवाल थोड़े भी बदलाव के साथ आ जाएं तो परिणाम गोता खा जाता है।

सबसे महत्वपूर्ण बात तो ऐसा माहौल बनाने की है जिसमें शिक्षक कक्षाओं में पाठ्यपुस्तकों और अन्य सुविधाओं का समुचित इस्तेमाल करते हुए नियमित रूप से पढ़ाई करवाएं। अन्य कोई आसान समाधान ज़्यादा दिन तक चलेगा नहीं। इसे कैसे संभव बनाया जाए, इसके लिए व्यापक विचार-विमर्श की ज़रूरत होगी। पढ़ाई में आसान रास्तों का सहारा लेना अब बेहद प्रचलित हो चुका है और बेहतर नतीजों के लिए इसमें बदलाव लाना ही होगा।

जहां तक मध्यप्रदेश का सवाल है, यहां हाई स्कूलों को लेकर अराजकता की स्थिति है। विभिन्न दबावों के चलते हर दूसरे गांव में इस बात की परवाह किए बगैर हाईस्कूल

खोल दिए गए हैं कि वहां समुचित स्टॉफ अथवा अन्य सुविधाएं हैं भी या नहीं। मैं ऐसे कई स्कूल देख चुका हूं जहां दस साल से भी अधिक समय से माध्यमिक स्कूलों के शिक्षकों से काम चलाया जा रहा है। सालों से कई विषयों के अध्यापकों की नियुक्ति नहीं हो पाई है। तथाकथित नए हाई स्कूलों की हालत तो पहले से स्थापित स्कूलों से भी बदतर है।

वर्षो से इस तथ्य की अनदेखी की जाती रही है कि हाई स्कूल ऐसे स्थानों पर शुरू किए जाने चाहिए जो केंद्र में हों और पर्याप्त संख्या में विषय विशेषज्ञ शिक्षकों की नियुक्ति की जानी चाहिए। प्रयोगशालाएं और पुस्तकालय अनिवार्य हैं, लेकिन उन्हें 'लक्ज़री' माना जाता है। ऐसे कई हाईस्कूल हैं जिन्हें बेहद प्रतिकूल परिस्थितियों में चलाया जा रहा है। हाई स्कूलों को शुरू करने को लेकर कोई क्षेत्रवार योजना भी नहीं है और इसलिए कितने ब्लॉक या कस्बों में स्कूल खोले जाने हैं, इस सम्बंध में किसी निष्कर्ष पर पहुंचने का कोई प्रयास भी नहीं किया जाता। इस व्यवस्था में प्रेरणा और जवाबदेही का स्तर भी काफी कम है जिससे स्थिति और भी गंभीर बन जाती है।

गैर शैक्षणिक ड्यूटी, विशेषकर चुनावों के दौरान लगने वाली ड्यूटी, से स्कूलों के रोज़मर्रा के कामकाज में लगातार बाधाएं आ रही हैं। इस संदर्भ में ऐसे कार्यों को शिक्षण कार्य से ऊपर रखा जाता है। नौकरशाही प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से यह संदेश देती रहती है। शिक्षक भी इसे ही अपनी प्राथमिकता समझने लगते हैं और उसका पूरा फायदा भी उठाते हैं। यह एक दुष्चक्र है।

ग्रामीण इलाकों में हाई स्कूल प्रशासनिक गतिविधियों का केंद्र होते हैं, लेकिन वहां पर्याप्त संख्या में क्लर्क उपलब्ध नहीं होने की वजह से कम से कम एक शिक्षक सदैव क्लेरिकल कार्य में ही उलझा रहता है। मैं भूगोल के एक ऐसे शिक्षक को जानता हूं जो कम कर्मचारियों वाले ऐसे ही एक स्कूल में वर्षों से क्लर्क का कार्य कर रहे हैं और ऐसे कार्य के साथ मिलने वाले रुतबे की वजह से वे अपनी इस ड्यूटी से संतुष्ट भी हैं। उन्होंने शायद ही कभी वह कार्य किया हो जिसके लिए उनकी नियुक्ति की गई थी।

इस स्थिति में तब तक कोई परिवर्तन नहीं आएगा, जब तक कि इस दुष्चक्र को तोड़ा नहीं जाता, वर्षों से बने सामाजिक मानदंडों को बदला नहीं जाता और क्लेरिकल कार्य के लिए अलग कर्मचारियों की नियुक्ति नहीं की जाती। अब जबकि पंचायत चुनाव नज़दीक हैं, क्या शिक्षा मंत्री के पास इस सम्बंध में कोई योजना है?

अधिकांश स्कूलों में तो प्रधानाध्यापक भी नहीं हैं जो कार्य-व्यवस्थाओं को सुनिश्चित कर सकें। जिन स्कूलों में प्रधानाध्यापक होते भी हैं, वहां भी वे अपने शिक्षकों पर नियमित कक्षाएं लेने के लिए ज़ोर नहीं दे सकते क्योंकि प्रत्येक शिक्षक की कहीं न कहीं से अपनी 'जुगाड़' होती है जिससे उन्हें अपनी मनमानी करने के लिए बढ़ावा मिलता है। जब तक ऊपरी स्तर पर परिवर्तन नहीं होता है या उसे बदलाव के लिए विवश नहीं किया जाता, तब तक हम इन संस्थानों से स्कूलों की तरह कार्य करने की अपेक्षा नहीं कर सकते। मैं एक ऐसे प्रतिष्ठित स्कूल के बारे में जानता हूं जो धीरे-धीरे खत्म-सा हो गया था। इसे एक ऐसे दिलेर प्रधानाध्यापक की ज़रूरत थी जो धमकियों का सामना कर सके और एक कलेक्टर के समर्थन की भी ताकि कुछ व्यवस्था बनाई जा सके। वहां जैसे ही नियमित पढ़ाई होने लगी, उपस्थिति 10 फीसदी से बढ़कर 70 फीसदी तक पहुंच गई और फिर क्लास में सभी बच्चों का बैठना भी मुश्किल हो गया।

इसलिए ज़रूरत हाई स्कूलों के लिए एक ठोस और तार्किक योजना बनाने की है ताकि प्रत्येक स्कूल में पर्याप्त संसाधन हों, विषयवार शिक्षकों की नियुक्ति हो और क्लेरिकल स्टॉफ अलग से नियुक्त किया जाए। इसके अलावा स्कूलों में व्यवस्था बनाने के लिए ऐसे प्रधानाध्यापकों की नियुक्ति की जाए जो स्थानीय राजनीतिक दबावों का सामना कर सकें। परीक्षा के पैटर्न में बदलाव लाकर 20 सवाल वाले प्रारूप को खत्म किया जाए और कक्षाओं में पाठ्यपुस्तकों के माध्यम से पढ़ाई सुनिश्चित की जाए, सामूहिक नकल पर लगाम लगाई जाए। और सबसे बढ़कर तो यह सुनिश्चित किया जाए कि प्राथमिक व माध्यमिक स्कूल सही ढंग से कार्य करें। ***(स्रोत फीचर्स)***